Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2581- 6306

# साम्प्रतिक काव्यप्रयोजन–विमर्श

**अनुज कुमार द्विवेदी**
वरिष्ठ शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग
नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय,
प्रयागराज,उत्तर प्रदेश।

**डॉ. देवनारायण पाठक**
संस्कृत–विभागाध्यक्ष
नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय,
प्रयागराज,उत्तर प्रदेश।

**सारांश–** आचार्य द्विवेदी ने अपनी नवनवोन्मेषी प्रतिभा के द्वारा काव्यप्रयोजन की वर्तमान परिप्रेक्ष्य के आधार पर विवेचना प्रस्तुत की है। अन्य आचार्यों की भाँति इनका काव्यप्रयोजन–विवेक अनेक दृष्टिकोणों से पृथक् एवं विशिष्ट प्रतीत होता है। प्राचीन काव्यशास्त्रकारों ने जहाँ पुरुषार्थ–चतुष्टय की प्राप्ति तथा सहृदयह्लादकत्व को काव्य का प्रमुख प्रयोजन माना है, उसके सापेक्ष अर्वाचीन काव्यशास्त्री आचार्यों ने देशकाल की परिस्थिति के अनुरूप काव्यप्रयोजनों का उल्लेख किया है।

**मुख्य शब्द–** प्रतिभा, काव्यप्रयोजन, अर्वाचीन,संस्कृत, काव्यशास्त्र, आचार्य, प्रो0 रहसबिहारी द्विवेदी।

संस्कृत काव्यशास्त्र के विकास की परम्परा आचार्य भरतमुनि से लेकर अद्यतन युगानुरूप काव्यांगों का विवेचन करती हुई अविच्छिन्न रूप से प्रवाहमान है। यह कहा जा सकता है कि पण्डितराज जगन्नाथ के पश्चात् काव्यशास्त्र की यह गति किंचित शिथिल अवश्य हुई, परन्तु अवरुद्ध नहीं हुई। जिस प्रकार भरतमुनि भामह, मम्मट प्रभृति प्राचीन आचार्यों ने काव्यांगों का समुचित विवेचन किया उसी प्रकार अर्वाचीन काव्यशास्त्रियों आचार्य देवाप्रसाद द्विवेदी, प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी, प्रो0 राजेन्द्र मिश्र एवं प्रो0 रहसबिहारी द्विवेदी प्रभृति ने भी काव्यशास्त्रीय विषय पर पर्याप्त सारगर्भित अन्वेषण प्रस्तुत कर काव्यशास्त्रीय चिंतन को नवीन अवधारणाओं से अवलोकित किया है।

प्रायेण समस्त प्राचीन एवं अर्वाचीन काव्यशास्त्री आचार्यों ने काव्यप्रयोजन पर विशद विचार–विमर्श किया है। गहन मीमांसा के पश्चात् यह तथ्य उपस्थित हुआ कि एक या अनेक प्रयोजनों को लक्ष्य करके कवि काव्यसर्जना कर सकता है। काव्य के रचयिता एवं अध्येता दोनों का हित इसमें निहित होता है। काव्यरचनाका कोई न कोई प्रयोजन अवश्य होता है। कहा भी गया है–**'प्रयोजनमनुद्दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते**[1] काव्यरचना के कारण ही कवि इस जगत् में यश प्राप्त करता है। **आचार्य भर्तृहरि** ने इसी आशय से लिखा है कि–उन काव्य की रचना करने वाले रससिद्ध कवीश्वरों की जय हो जिनका यशरूपी शरीर जरामरण के भय से मुक्त है–

**"जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।**
**नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्।"**[2]

प्रयोजनमूलक कार्य ही मनुष्य को सद्गति प्रदान करता है। शास्त्रों में वर्णित अनुबन्ध–चतुष्टय में प्रयोजन एक महत्त्वपूर्ण अंग है– **तत्रानुबन्धो नामाधिकारि–विषय–सम्बन्ध–प्रयोजनानि।**[3]

काव्यप्रयोजन पर सर्वप्रथम **आचार्य भरतमुनि** ने अपने विचार प्रकट किये–

**उत्तमाधममध्यानां नराणां कर्मसंश्रयम्।**

**हितोपदेशजजनं धृति क्रीडासुखाधिकृत।**

**दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम।**

**विश्रान्तिजननंकाले नाट्यमेतद्भविष्यति।।**[4]

प्रायः समस्त उत्तरवर्ती काव्यशास्त्री आचार्यों ने अपने–अपने काव्यप्रयोजन–सम्बन्धी विचारों को आचार्य भरत द्वारा प्रतिपादित इसी काव्यप्रयोजन की परिधि में ही प्रस्तुत किया है। कई आचार्यों ने चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) को काव्यप्रयोजन के रूप में स्वीकार किया। **आचार्य भामह** ने कहा है कि–

**धर्मार्थकामकोक्षाणां वैचक्षण्यं कलासु च।**

**करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधु काव्यनिबन्धनम्।**[5]

अर्थात् उत्तम काव्यरचना से चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है।

**आचार्य वामन** ने काव्यसर्जना के दो प्रयोजन बताए–(1) यश तथा (2) आानन्द–

**काव्यं सद्दृष्टार्थ प्रीतिकीर्ति हेतुत्वात्।**

**प्रतिष्ठां काव्य बन्धस्य यशसः सरणिं बिदुः।**

**अकीर्तिवर्तिनी त्वेवं कुकवित्वविडम्बनाम्।**

**कीर्तिस्वर्गफलामाहुरासंसारं विपश्चितः।**

**अकीर्ति तु निरालोकनरकोद्देशदूतिकाम्।**

**तस्मात्कीर्तिमुपादातुकीर्तिञ्च निर्वाहितुम्।**

**काव्यालंकारसूत्रार्थः प्रसादः कविपुंगवैः।**[6]

**आचार्य रूद्रट** ने भी धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष रूपी पुरुषार्थ चतुष्टय को काव्य का प्रयोजन बताया–

**ननु काव्येन क्रियते सरसानामवगमश्चतुवर्गे।**

**लघु मृदु च नो रसेभ्यस्ते हि त्रस्यन्ति शास्त्रेभ्यः।**[7]

पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति को काव्यप्रयोजन के रूप में स्वीकार करने वाले आचार्यों में **आचार्य कुन्तक** भी सम्मिलित हैं–

**धर्मादिसाधनोपायः सुकुमार क्रमोदितः।**

**काव्यबन्धोऽभिजातानां हृदह्लादकारकः।।**

**व्यवहारपरिस्पन्द सौन्दर्यव्यवहारिभिः।**

**सत्काव्याधिगमादेव नूतनौचित्यमाप्यते।।**

**चतुर्वर्गफलास्वादमप्यतिक्रम्य तद्विदाम्।**

**काव्यामृतरसेनान्तश्चमत्कारो वितन्यते।।**[8]

आचार्य वामन का समर्थन करते हुए **आचार्य भोज** ने भी यश तथा आनन्दप्राप्ति को काव्य का प्रयोजन बताया–

**निर्दोषं गुणवत्काव्यमलंकारैलंकृतम्।**

**रसान्वितं कविः कुर्वन् कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति।।**[9]

**आचार्य मम्मट** ने काव्यरचना के छः प्रयोजन बताते हुए अन्य आचार्यों के प्रयोजनों का एक समन्वित रूप प्रस्तुत किया तथा आनन्द की प्राप्ति को प्रमुख काव्यप्रयोजन माना–

**काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।**

**सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।**[10]

**साहित्यदर्पणकार** ने नवीन विचार न देते हुए पुरुषार्थ–चतुष्टय को ही काव्यप्रयोजन माना।

**चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।**

**काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरूप्यते।**[11]

**पण्डितराज जगन्नाथ** ने कहा कि कीर्ति, परमआह्लाद, गुरु, राजा एवं देवता की कृपा आदि काव्यरचना के प्रयोजन हो सकते हैं।[12]

पूर्वाचार्यों की भाँति अर्वाचीन काव्यशास्त्रीय परम्परा के भी कुछ आचार्यों ने अपनी अपनी कृतियों में काव्य–प्रयोजन के सम्बन्ध में अपनी नवीन मौलिक उद्भावनाएँ प्रस्तुत की हैं।

**आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी** ने काव्यरचनाको कवि की दृष्टि से निष्प्रयोजन एवं सप्रयोजन दो रूपों में स्वीकृत किया है। उनके अनुसार कवि किसी प्रयोजनवश ही काव्य नहीं रचता अपितु यदा–कदा यश और अर्थ की प्राप्ति हुए बिना भी काव्य रचना करने में उसकी प्रवृत्ति होती है।[13] अपि च आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी ने काव्य की तुलना माता के दूध से करते हुए कहा कि जिस प्रकार माता का दूध शिशु के गुणावगुण का विचार न करके शिशु को दुग्धरस से पुष्ट करता है, उसी प्रकार काव्य भी रसिक व्यक्ति को पुरुषार्थ रूपी अमृत का आस्वादन कराता है–

**न स्यात् प्रयोजन स्याद् वा कवेः सामाजिकस्य तु।**

**मातृस्तन्यं यथा काव्यं हन्त सर्वार्थसाधनम्।।**[14]

**प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी** ने 'मुक्ति' को काव्य का प्रयोजन बताया। यह मुक्ति सृष्टि की चेतना त्रैविध्यता (आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक) से तीन प्रकार की होती है।[15]

**प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र** ने काव्यरचना के प्रयोजन को बताते हुए कहा कि कवि धन, पुण्य, व्यवहारज्ञान और तात्कालिक आनन्द की प्राप्ति हेतु काव्यरचना नहीं करता बल्कि काव्यरचना तो उसका स्वभावजन्य कर्म है। प्रो. मिश्र काव्यरचना के द्विविध प्रयोजनों को बताते हैं–(1) यशप्राप्ति (2) कवि का स्वतः प्रकट होने वाला स्वभावजन्य कर्म।[16]

अर्वाचीन काव्यशास्त्रियों में ख्यातिलब्ध आचार्य **प्रो. रहसबिहारी द्विवेदी** ने भी अपनी काव्यशास्त्रीय कृति 'नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा' में काव्यप्रयोजन को स्पष्ट किया है–

**असन्तं मार्गमनुसृत्य सन्तं गमयितुं जनम्।**

**हृदाह्लादिकया वाचा प्रज्ञावान काव्यमङ्कते।।**

**कविकीर्ति पुरस्कार–स्वान्तः सुखसमीहया।**

**प्राक्कथावस्तु संस्कार सताञ्च चरिताङ्कनम।।**

**नव्यकाव्यविधोन्मेषं व्यङ्ग्योक्तिं विकृतौ तथा।**

**राष्ट्रभक्तिं युगौचित्यं पर्यावरणचेतनम्।।**

**राष्ट्रस्वातन्त्र्यवीराणां चरितं चाराध्यमीश्वरम्।**
**समुद्दिश्याधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजाः।।**[17.]

अर्थात् हृदयाह्लादक वाणी द्वारा असज्जनता के मार्ग का परित्याग कर सज्जनता के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करने हेतु विद्वान् जन काव्यरचना किया करते हैं। कवि, कीर्ति, पुरस्कार स्वान्तः सुख की कामना, प्राचीन कथावस्तु के संस्कार, सच्चरितांकन, नूतन काव्यविधा का उन्मेष, विकृति सूचक व्यंग्योक्ति, राष्ट्रभक्ति, युगधर्म, पर्यावरणचेतना, राष्ट्र के स्वातन्त्र्य वीरों का चरित तथा आराध्य ईश्वर को प्रयोजन बनाकर वर्तमान कविगण काव्यरचना कर रहे हैं।

इस प्रकार आचार्य द्विवेदी ने अपनी नवनवोन्मेषी प्रतिभा के द्वारा काव्यप्रयोजन की वर्तमान परिप्रेक्ष्य के आधार पर विवेचना प्रस्तुत की है। अन्य आचार्यों की भाँति इनका काव्यप्रयोजन–विवेक अनेक दृष्टिकोणों से पृथक् एवं विशिष्ट प्रतीत होता है। प्राचीन काव्यशास्त्रकारों ने जहाँ पुरुषार्थ–चतुष्टय की प्राप्ति तथा सहृदयह्लादकत्व को काव्य का प्रमुख प्रयोजन माना है, उसके सापेक्ष अर्वाचीन काव्यशास्त्री आचार्यों ने देशकाल की परिस्थिति के अनुरूप काव्यप्रयोजनों का उल्लेख किया है।

यद्यपि आचार्य द्विवेदी के काव्यप्रयोजनों में पूर्वाचार्यों विशेषकर आचार्य मम्मट प्रतिपादित काव्यप्रयोजनों का प्रतिबिम्ब परिलक्षित होता है, तथापि उन्होंने अपनी कृति नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा में नूतन विषयों राष्ट्रभक्ति तथा युगधर्म आदि का भी समावेश अपने काव्यप्रयोजन विवेचन के अन्तर्गत किया है।।

## सन्दर्भ–सूची


1. सर्ववेदान्तसिद्धान्तसारसंग्रह–11
2. नीतिशतकम्–21
3. वेदान्तसार–4
4. नाट्यशास्त्र–प्रथम अध्याय–कारिका 113–15
5. काव्यालंकार 1.12
6. काव्यालंकारसूत्र 1.1–सूत्र 5 तथा उसकी वृत्ति
7. काव्यालंकार 12.1
8. वक्रोक्तिजीवितम्–प्रथमोन्मेष–कारिका 3–5
9. सरस्वतीकण्ठाभरण–1.2
10. काव्यप्रकाश–प्रथमोल्लास–कारिका–2 तथा वृत्ति
11. साहित्यदर्पण–1.2
12. रसगंगाधर–प्रथम आनन
13. काव्यालंकारकारिका–तृतीय अधिकरण कारिका–20–24
14. तदेव कारिका–26
15. अभिनवकाव्यालंकारसूत्र 1.2 पृ. 15
16. अभिराजयशोभूषणम्–प्रथम उन्मेष कारिका–23–29 पृ. 28
17. दूर्वा द्वितीयोन्मेष अप्रैल–मई–जून–2005, पृ. 93